International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

प्रेमचंद साहित्य में सद्भाव एवं वर्तमान समय- साम्प्रदायिकता के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. दीपक सिंह

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी), राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अम्बिकापुर, सरगुजा, छत्तीसगढ़

सारांश

प्रस्तुत शोध-पत्र में 'सदभाव' को विभिन्न सन्दर्भों के साथ साम्प्रदायिकता के विशेष सन्दर्भ में देखने का प्रयास किया गया है | भारत एक बहुलतावादी देश है ऐसे में बहुतेरे ऐसे तत्व हैं जो सामाजिक सदभाव को चुनौती देते रहते हैं | इस चुनौती का सामना करने हेतु साहित्य एक बड़ा औजार है | प्रेमचंद ने अपने सम्पूर्ण साहित्य में साम्प्रदायिकता की राजनीति को एक ऐतिहासिक दृष्टि के साथ चुनौती दी है | साम्प्रदायिकता हमेशा संस्कृति को एक ढाल की तरह इस्तेमाल करती है ऐसे में संस्कृति की स्पष्ट अवधारणा को समझना बहुत आवश्यक है |प्रेमचंद का रचनाकर्म हमें बताता है कि साम्प्रदायिकता एक गैर ऐतिहासिक या कहें गढ़े गए इतिहास पर आधारित होती है तथा सामाजिक ताने-बाने को सिर्फ हानि ही पहुचती है |

बीज शब्द – सदभाव, भारतीयता, साम्प्रदायिकता, वर्णाश्रम धर्म, राजनीति, हिन्दू-मुस्लिम, बुद्धिजीवी, इतिहास, कर्बला, द्विराष्ट्र,

यह विषय देखने में एकदम सादा है लेकिन इसकी व्याप्ति पूरी सभ्यता को अपनी जद में समेट लेती है|सद्भाव शब्द का अर्थ विभिन्न सामाजिक वर्गों के हितों के अनुरूप देश और काल के हिसाब से बदलता रहता है|'सद्भाव' शब्द का कोश गत अर्थ है-'१.प्रेम और हित का भाव|२.कोई काम करने में सच्चा या अच्छा भाव या नीयत|३.मेल-जोल,मैत्री|'1 इस तरह देखें तो सद्भावना का अर्थ होगा व्यक्ति,देश,समाज का मंगल सोचना|

कोशगत अर्थ से आगे बढ़कर जब हम समाज के भीतर'सद्भाव'शब्द की अंतःक्रिया को देखने का प्रयास करते हैं तो एक बहुत ही जटिल द्वंद्वात्मक रिश्ता दिखाई पड़ता है|यहाँ सामाजिक श्रेणीक्रम के अनुसार सद्भाव का अर्थ बदलता रहता है|राजा-प्रजा,सामंत-रैयत,पूजीपति-मजदूर व सवर्ण-दलित के लिए सद्भाव परस्पर विरोधी अर्थ रखते हैं|पूंजीपति के लिए सद्भाव का अर्थ है कि मजदूर उसके हित को पूरा करते रहें|जैसे ही मजदूर अपने लिए बराबरी,मैत्री व अपने हितों की रक्षा के लिए आवाज़ उठाता है तुरंत ही उसे सामाजिक सद्भाव को बिगाड़ने वाला घोषित कर दिया जाता है|यह द्वंद्व कोई आज का नहीं है बल्कि सदियों से ऐसा ही चला आ रहा है |सद्भाव की बात तुलसीदास भी करते हैं,कबीर और रैदास भी करते हैं लेकिन दोनों में फर्क है |तुलसीदास उत्तरकाण्ड में राम राज की जो अवधारणा देते हैं वह बड़े सामाजिक सद्भाव की बात करता है -

'राम राज बैठे त्रैलोका | हरषित भए गए सब सोका ||
बयरु न कर काहु सन कोई | राम प्रताप विषमता खोई |'2

लेकिन यहाँ बैर और विषमता खोने का अर्थ मनुष्य-मनुष्य के बीच बराबरी नहीं है|समस्त सद्भाव वर्णाश्रम धर्म के पालन में निहित है|यहाँ राम राज में समानता'एक जोति थैं सब उत्पन्ना कौन बाभन कौन सूदा'3 के बिलकुल उलट है-

'बरनाश्रम निज निज धरम निरत वेद पथ लोग
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहीं भय सोक न रोग ||'4

अब ऐसे में कबीर की तरह 'जाति पांति पूछे नहीं कोई हरी का भजे सो हरी का होई' कहने वाला,ब्राहमण शूद्र को एक ही बूँद से उत्पन्न मानने वाला व्यक्ति तो सामाजिक सद्भाव का विरोधी ही माना जायेगा|यह अकारण नहीं है कि कबीर को व्यवस्था विरोधी माना जाता है और तुलसीदास को समन्वय की विराट चेतना से संचालित भक्त महाकवि|अब यदि सद्भाव के कोशगत अर्थ को पकड़ा जाय तो किसे सद्भाव का असली कवि माना जायेगा ?

उच्च वर्ण के लिए वर्णाश्रम धर्म का पालन सद्भाव है लेकिन निम्न वर्ण के शोषण, दमन के समस्त सूत्र यहीं से पैदा होते हैं|संत कवियों ने जिस समता मूलक श्रमशील समाज की कल्पना की है वह बहुत ही लोकतान्त्रिक है|रैदास के बेगमपुरा में सभी शोषितों,वंचितों के लिए गरिमामय जीवन की कामना है वहां न वर्णाश्रम है न कोई भेद लेकिन यह पूरी कल्पना सत्ता संरचना को चुनौती देने वाली है इसलिए सद्भाव की सच्ची प्रेरणा से संचालित होने के बावजूद उच्च वर्ण के लिए सद्भाव विरोधी ही मानी गई|डॉ.निरंजन सहाय लिखते हैं कि"उन्होंने कर्म की शुचिता से जुड़े जिस विवेक को स्थापित किया,वह अनेक वर्णधर्मी लोगों के लिए चुनौती बना उन्होंने कहा -

रैदास बाभन मत पूजिए जो होवे गुनहीन |
पूजिए चरन चंडाल के जो हो गुन परवीन ||

मान्यता है इसी के जवाब में तुलसीदास ने रामचरित मानस में लिखा –

शापत ताडत, पारुश, कहन्ता | पूज्य, विप्र, अस, गावहिं संता ||
पूजिय विप्र सकल गुण हीना | शूद्र न गुण गण ग्यान प्रवीणा ||5

बहरहाल भक्ति कविता में तमाम अंतर्विरोधों के बावजूद मनुष्यता की बराबरी आधारित व्यापक धारणा की तरफ बढ़ने की एक कोशिश तो दिखाई ही पड़ती है|

अब आते हैं प्रेमचंद पर|ऊपर जो बातें कही गईं हैं वे प्रेमचंद-साहित्य में सद्भाव का अर्थ स्पष्ट करने की भूमिका स्वरूप हैं|प्रेमचंद का साहित्य-सृजन शोषण विहीन समाज की रचना के महती उद्देश्य से संचालित है जहाँ मनुष्य-मनुष्य के बीच बराबरी का स्वप्न आकार लेता दिखाई पड़ता है|यदि हम सद्भाव को इसी अर्थ में ग्रहण करते हैं तो प्रेमचंद का पूरा साहित्य ही सद्भाव का साहित्य है|यथार्थ को परे रखकर किसी तरह के सामाजिक सद्भाव की कल्पना नहीं की जा सकती|सच्चा सद्भाव एक बराबरी आधारित समाज में ही संभव है|यह अलग बात है कि यह बात वर्तमान समय में और प्रेमचंद के समय में भी घृणा का प्रचार मानी जाती रही आखिर यूँ ही तो नहीं प्रेमचंद को घृणा का प्रचारक कहा गया

होगा|प्रेमचंद के समय से आज के समय तक प्रगति यह हुई है कि अब इन्हीं बातों पर सरकारी दमन,हत्या,जेल आदि आम बात है|

प्रेमचंद साहित्य में सद्भाव के दुश्मन के रूप में जिन तत्वों की शिनाख्त की गई है वे हैं -

1- साम्प्रदायिकता /संस्कृति का खेल
2- महाजनी सभ्यता
3- जाति सत्ता
4- पितृसत्ता

इस शोध –पत्र में साम्प्रदायिकता हमारा मुख्य सरोकार है | साम्प्रदायिकता सामाजिक सद्भाव की सबसे बड़ी दुश्मन है यह समाज को खंड-खंड में बाँट देती है|अपने धर्म नस्ल जाति को दूसरे से श्रेष्ठ मानना इसका मूलाधार है|यह पूर्णतः मनुष्यता विरोधी है|प्रेमचंद मनुष्यता का अकाल नामक निबंध में लिखते हैं"हिन्दू और मुसलमान न कभी दूध चीनी थे,न होंगे न होने चाहिए| ...जरूरत सिर्फ इस बात की है कि उनके नेताओं में परस्पर सहिष्णुता और उत्सर्ग की भावना हो|आम तौर पर हमारे नेता वह सज्जन होते हैं जो अपने सम्प्रदाय की मुसीबतों और शिकायतों का बहुत सरगर्मी से रोना रोया करते हैं|वह अपने सम्प्रदाय के लोगों की दृष्टि में लोकप्रिय बनने के लिए उसकी भावनाओं को उकसाते रहते हैं और समझौते के मुकाबिले में,जो उनके उस विलाप को बंद कर देगा, झगड़े को कायम रखना ज्यादा जरूरी समझते हैं |... हमारा नेता वह होना चाहिए जो गंभीरता से समस्याओं पर विचार करे|मगर होता यह है कि उसकी जगह शोर मचाने वालों के हिस्से में आ जाती है जो अपनी जोरदार आवाज़ से जनता की गन्दी भावनाओं को उभारकर उन पर अपना अधिकार जमा लिया करते हैं|वह कौम को दरगुजर करना नहीं सिखाता,लड़ना सिखाता है उसका फायदा इसी में है|"6 प्रेमचंद का यह लेख ज़माना में फरवरी 1924 में छपा था| देश उस समय अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त होने में लगा था लेकिन वहीँ साम्प्रदायिक राजनीति देश के सद्भाव को बिगाड़ कर साम्राज्यवादियों की मदत कर रही थी|प्रेमचंद ने साम्प्रदायिक राजनीति के घातक परिणामों को बहुत पहले ही महसूस कर लिया था|प्रेमचंद स्वराज के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता को पहली शर्त मानते थे|प्रेमचंद के वर्णन से पता चलता है कि हिन्दू-मुसलमान के बीच पूर्वाग्रह और वैमनस्य के टूल जो उस समय थे वही आज भी कार्य कर रहे हैं|आज की राजनीति में दो तरह की रवायतें दिखती हैं एक तरफ तो ऐसे दल हैं जिनकी बुनियाद ही साम्प्रदायिकता पर टिकी हुई है दूसरी तरफ जो सेकुलर सिद्धांतों पर आधारित दल हैं वे भी हमेशा सुरक्षात्मक रुख अख्तियार किये हुए रहते हैं वे अपने को धर्म विरोधी समझ लिए जाने के डर से सदैव ग्रस्त रहते हैं|प्रेमचंद अपने इसी लेख में पंडित नेहरू तक के इसी तरह के बर्ताव का उल्लेख करते हैं|वे प्रश्न उठाते हैं कि 'आज कौन-कौन हिन्दू हैं जो हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए जी-जान से काम कर रहा हो, जो उसे हिन्दोस्तान की सबसे महत्वपूर्ण समस्या समझता हो, जो स्वराज्य के लिए एकता को बुनियादी शर्त समझता हो|'7 आज की राजनीति में भी यह समस्या बनी हुई है|जो प्रयास हैं वे नाकाफी हैं बल्कि आज की आक्रामक साम्प्रदायिक राजनीति ने तमाम विपक्षी दलों को उसकी पिच पर खेलने के लिए मजबूर कर दिया है | आज की राजनीति में सबसे बड़ा प्रतिपक्ष छात्र और बुद्धिजीवी रचते दिखाई पड़ते हैं और वे ही सर्वाधिक निशाने पर भी हैं, प्रेमचंद के समय में भी यही प्रक्रिया चल रही थी हिन्दू मुस्लिम सद्भाव के सबसे बड़े लेखक को घृणा का प्रचारक

तक कहा गया शायद इसी कारण उन्हें 'जीवन में घृणा का महत्व' जैसा निबंध लिखना पड़ा|प्रेमचंद ने एक नाटक लिखा था कर्बला जिसमें कर्बला के मैदान में कुछ हिन्दुओं को हजरत इमाम हुसैन की तरफ से लड़ता हुआ दिखाया गया था|इस मुद्दे को लेकर प्रेमचंद पर सवाल उठाये गए जबकि यह ऐतिहासिक रूप से सच है|प्रेमचंद लिखते हैं"मित्रवर श्रीयुत रामचन्द्र टंडन ने मेरे 'कर्बला' नामी ड्रामा की आलोचना करते हुए यह शंका प्रकट की है कि इस नाटक मे हिन्दू पात्र क्यो लाये गये।उनका कथन है---'हिन्दू पात्रों के समावेश से न हिन्दुओं को प्रसन्नता होगी, न मुसलमानों को तुष्टि, इसलिए हिन्दू पात्र न लाये जाते तो कोई हानि न होती।' यह ड्रामा ऐतिहासिक है, और इतिहास से यह पता चलता है कि कर्बला के संग्राम में कुछ हिन्दू योद्धाओं ने भी हजरात हुसैन का पक्ष लेकर "प्राणोत्सर्ग" किये थे, अत, उन पात्रों का बहिष्कार करना किसी भाँति युक्तिसगत न होता |"8 यहाँ इसे उद्धृत करने का आशय सिर्फ यह बताना है कि उस समय भी एक राइटर के लिखे पर गैर ऐतिहासिक रूप से हमले किए जाते थे आज वह विकराल रूप लेकर हत्या तक पहुच चुका है|मुक्तिबोध अपनी कविता अँधेरे में लिखते हैं लिखते क्या हैं मानो भविष्यवाणी करते हैं-

'सचाई थी सिर्फ़ एक अहसास
वह कलाकार था
xxxxxxxxxxxxxxxx
किन्तु अचानक झोंक में आकर क्या कर गुज़रा कि
सन्देहास्पद समझा गया और
मारा गया वह बधिकों के हाथों |'9

संदेहास्पद होने मात्र से आपकी हत्या की जा सकती है | साम्राज्यवादी हो या सम्प्रदायवादी इतिहास को विकृत करना उनका प्रिय शगल है|लेकिन लेखकों की भी एक परंपरा होती है प्रेमचंद का नाटक कर्बला सच्चे सद्भाव का नाटक था | लेखिका नासिरा शर्मा अपने उपन्यास पारिजात से इसकी गवाही देती हैं|पारिजात ऐसा उपन्यास है जिसमें हुसैनी ब्राह्मणों की कथा विस्तार से दर्ज है|ये वही ब्राहमण थे जो कर्बला के मैदान में हजरत इमाम हुसैन की तरफ से लडे थे और बदले में मोहब्बत से हुसैनी ब्राह्मण कहलाये|बहरहाल इतिहास के मुद्दे पर आते हैं, प्रेमचंद बीमारी की नब्ज़ पकड़ते हैं "विजयी जाति पराजितों पर जो सबसे कठोर आघात करती है, वह है उनके इतिहास को विषैला बना देना|प्राचीन हमारे भविष्य का पथ-प्रदर्शक हुआ करता है|प्राचीन को दूषित करके उसमें द्वेष, भेद और कीना भरकर,भविष्य को भुलाया जा सकता है|वही भारत में हो रहा है|यह बात हमारे भीतर ठूंस दी गई है कि हिन्दू और मुसलमान हमेशा से दो विरोधी दलों में विभाजित रहे हैं|हालांकि ऐसा कहना सत्य का गला घोटना है|"10 यहाँ प्रेमचंद का सीधा इशारा अंग्रेजों की तरफ है|1857 की महान एकता के बाद साम्राज्यवादियों ने अपनी नीति बदल ली थी वे हमारे इतिहास में कीना भरने लगे थे इसमें सम्प्रदायवादी उनके सबसे बड़े मद्दगार साबित हुए|इतिहास के साथ फासीवादी कार्य योजना भी एकदम यही है बल्कि उसका तो पूरा पसारा ही इतिहास के विकृतीकरण पर आधारित होता है|

"भव्याकार भवनों के विवरों में छिप गये
समाचारपत्रों के पतियों के मुख स्थल।
गढ़े जाते संवाद,

गढ़ी जाती समीक्षा,
गढ़ी जाती टिप्पणी जन-मन-उर-शूर।
बौद्धिक वर्ग है क्रीतदास,
किराये के विचारों का उद्भास |"11

ऐसा लगता है अतीत की यह घोषणा वर्तमान में दैत्य बनकर हमारे सामने आ खड़ी हुई है| अतीत में नाजीवादियों ने इतिहास को जितना विकृत किया था उतना आज एक दिन में किया जा रहा है|पूंजी और संप्रदायवादियों से मिलकर बने फासीवादी गठजोड़ ने तकनीकी के आक्रामक इस्तेमाल कर बूढ़े नौजवान बच्चे सबको अपनी जद में ले लिया है|हमारे समय में गढ़े गए इतिहास ने वास्तविक इतिहास को अकल्पनीय क्षति पहुचाई है|व्हाट्सएप विश्वविद्यालय तो एक मुहावरा बन चुका है|किसी भी समाज में सद्भाव मेल-जोल और घनिष्ठता से पैदा होता है| यदि हिन्दू और मुसलमान को ही लें तो वर्तमान भारत में इन दोनों के बीच मेल-जोल का पुल बुरी तरह से क्षतिग्रस्त है|एक ही समाज में एक जैसी चुनौतियों का सामना करते हुए उनमें एकता के बिंदु अत्यंत क्षीण हो चुके हैं|सामाजिक ताना-बना बिखर चुका है दोनों के रहवास अलग हो चुके हैं|आज हम जिस परिणति पर पहुचे हैं वह इतिहास के विकृतीकरण का ही परिणाम है|हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे से भिन्न हैं,उनकी संस्कृति अलग है,वे एक दूसरे के साथ नहीं रह सकते आदि बातें अनैतिहासिक होते हुए भी समाज के भीतर बड़े पैमाने पर मान्यता प्राप्त कर चुकी हैं|सावरकर और जिन्ना द्वरा दिया गया द्विराष्ट्र का सिद्धांत भारत विभाजन का आधार बना था लेकिन हमने इतिहास से कुछ नहीं सीखा देश के बंटवारे से शुरू हुई यह कार्य-योजना आज भी दिलों के बटवारे के रूप में कार्यरत है|प्रेमचंद ने अपने समय में इस अवधारणा को सार्थक चुनौती दी थी उन्होंने यह सिद्ध किया था कि यह पूरा सिद्धांत ही झूठ पर आधारित है|(इतिहासकार विपिनचन्द्र ने भी साम्प्रदायिक कार्ययोजना को झूठ पर आधारित बताते हुए उसके विकास को रेखांकित किया है)|इस सन्दर्भ में प्रेमचंद साम्प्रदायिकता और संस्कृति नामक निबंध में विस्तार से प्रकाश डालते हैं|संस्कृति की व्याख्या करते हुए वे हिन्दुओं और मुसलमानों के रहन-सहन,खान-पान,वेश-भूषा,भाषा आदि पर विस्तार से बात करते हुए यह सिद्ध करते है कि संस्कृति का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं होता|भारत में रहने वाले विभिन्न धर्मो के लोग एक हि संस्कृति के अंग हैं "फिर वह कौन सी संस्कृति है जिसकी रक्षा के लिए साम्प्रदायिकता इतना ज़ोर बाँध रहीं है | .... संस्कृति की पुकार निरा ढोंग है |12" दरअसल साम्प्रदायिकता की बुनियाद झूठ और घृणा के प्रचार से बनती है|हिन्दू और मुसलमान एक दुसरे से अपनी अन्यता स्थापित करने के लिए महान हिंदू और मुस्लिम संस्कृति का भ्रम खड़ा करते हैं|"साम्प्रदायिकता सदैव संस्कृति की दुहाई दिया करती है|उसे अपने असली रूप में निकलते लज्जा आती है|13" इस दृष्टि से देखें तो आज जो लोग अपने को भारतीय संस्कृति का रक्षक कहते हैं दरअसल वे इसकी बुनियाद को ही खोखला कर रहे हैं|संस्कृति को और बेहतर रूप में समझना हो तो हमें भारतीय संगीत के इतिहास की यात्रा करनी चाहिए| क्या हिन्दू संगीत और मुस्लिम संगीत जैसी कोई चीज अस्तित्व रखती है?हाल के दिनों में प्रकाशित रणेंद्र का उपन्यास गूंगी रुलाई का कोरस इस सवाल का बेहतर जवाब देने के साथ संस्कृति को पूर्णता में परिभाषित करता है|संगीत की जानिब से भारतीय राजनीति के अन्धकार का जैसा साक्षात्कार इस उपन्यास ने किया है वह हिंदी साहित्य की एक उपलब्धि है साथ ही प्रेमचंद की परम्परा का सुचिंतित विकास भी|पूरी तस्वीर देखने के लिए तो उपन्यास को

पढना पड़ेगा, यहाँ एक बानगी पेश है-''मुख्य रूप से मंदिर-मठों में गूँजनेवाले ध्रुपद और वीणा-वादन-बीनकारी को सँजोकर रखने वाले डागर परिवार की भी समझाइश करनी थी की म्लेच्छ होकर खानदान की कई-कई पीढ़ियों को अपनी जिन्दगी बर्बाद करने की क्या जरूरत थी?डागर बन्धु नसीर अमीनुद्दीन और नसीर मोइनुद्दीन को क्या जरूरत पडी थी कि पूरी दुनिया में ध्रुपद की रूहानी रोशनी फैलाएँ?किसने कहा था कि पेरिस में जाकर ध्रुपद सोसाइटी की स्थापना करें और उसे हिन्दुस्तानी तहज़ीब का प्रतीक बना दें!लेकिन बड़े गुलाम अली खां का हरिओम तत्सत् और डागर बंधुओ का ब्रह्मा तुम्हीं,विष्णु तुम्हीं का गान,उनके जीवन भर के सुर-लय के नाद, ब्रह्माण्ड के अनहद नाद में जाकर समा गए थे|उसे कैसे नष्ट किया जा सकेगा?और बड़ो बाबा अलाउद्दीन खां के माँ शारदा की आराधना के गान, बाबा बिस्मिल्लाह खान का रोज सुबह-सवेरे शहनाई के सुर से भगवान् शिव को भेजा गया सलाम, इन सबका क्या? सच कहें तो अमीर ख़ुसरो से लेकर शबनम के.खान तक हजारों-हजार उस्तादों-खान साहबों का गान एक ध्वनि ऊर्जा है जिसे कभी नष्ट ही नहीं होना था|सबके सब अंतरिक्ष में एक साथ मौजूद थे|किस छलनी से इन्हें छाना जाए?14" भारतीय संस्कृति विविधता युक्त बहुरंगी छतरी की तरह है जिसके बड़े से वितान के भीतर बहुत से छोटे-छोटे खांचे हैं , जिनमें बहुत सी भिन्नताएं हैं तो बहुत सी समानताएं भी हैं लेकिन वे सब भारतीयता के भीतर ही समाहित हैं यही भारतीय संस्कृति की विशिष्टता और सम्पूर्ण विश्व में उसकी प्रतिष्ठा का आधार है | हमारा देश इसी भावना से संचालित रहा है | यदि हम अपने स्कूली दिनों को याद करें तो विनय चन्द्र मौद्गल्य का लिखा गीत – 'हिन्द देश के निवासी सभी जन एक हैं' ही भारतीय संस्कृति की ताक़त है | एक शांतिपूर्ण समृद्ध भारत का सपना इसी रस्ते चलकर पूरा हो सकता है |

सन्दर्भ

1. संपादक : वर्मा आचार्य रामचंद्र, बृहत् प्रामाणिक हिंदी कोश, लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद, पुनर्मुद्रित संस्करण-2014 पृष्ठ-940
2. दास तुलसी : रामचरितमानस (सचित्र, सटीक, मोटा टाइप) गीता प्रेस गोरखपुर, संवत 2080 349 वां पुनर्मुद्रण , उत्तरकाण्ड, पृष्ठ- 930
3. संपादक : दास श्यामसुन्दर, कबीर ग्रंथावली, प्रकाशन संसथान, नई दिल्ली -2010 पृष्ठ-148
4. दास तुलसी : रामचरितमानस (सचित्र, सटीक, मोटा टाइप) गीता प्रेस गोरखपुर, संवत 2080 349 वां पुनर्मुद्रण , उत्तरकाण्ड, पृष्ठ- 930
5. https://www.hindisamay.com/content/11098/1/निरंजन-सहाय-आलोचना-बेगमपुरा-शहर-को-नाऊँ.cspx
6. संपादन: राम आनंद, भूमिका और मार्गदर्शन-रामविलाश शर्मा, प्रेमचंद रचनावली भाग-7जनवाणी प्रकाशन (https://premchandsahityasansthan.com/2022/07/09/premchand-rachnawali-7/) पृष्ठ- 284
7. वही पृष्ठ -280
8. वही पृष्ठ -304
9. मुक्तिबोध गजानन माधव: चाँद का मुह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली -2021, 'अँधेरे में' पृष्ठ- 281
10. संपादन: राम आनंद, भूमिका और मार्गदर्शन-रामविलाश शर्मा, प्रेमचंद रचनावली भाग-8 जनवाणी प्रकाशन (https://premchandsahityasansthan.com/2022/07/09/) हिन्दू-मुस्लिम एकता, पृष्ठ-100
11. मुक्तिबोध गजानन माधव: चाँद का मुह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली -2021, 'अँधेरे में' पृष्ठ- 291

12. संपादन: राम आनंद, भूमिका और मार्गदर्शन-रामविलाश शर्मा, प्रेमचंद रचनावली भाग-9 जनवाणी प्रकाशन (https://premchandsahityasansthan.com/2022/07/09/premchand-rachnwali-9) साम्प्रदायिकता और संस्कृति , पृष्ठ-26
13. वही पृष्ठ-24
14. रणेंद्र : गूँगी रुलाई का कोरस, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण 2023